Original Article
ISSN (Online): 2582-7472

ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts
July-December 2023 4(2), 1650–1657

DOES HINDI CINEMA SPEAK FOR VAISHYA SUBALTERN WOMEN?

क्या हिंदी सिनेमा वैश्य सबाल्टर्न महिलाओं के लिए बोलता है?

Dr. Avantika Singh [1], Annu Thakran [2], Dr. Dipika Sharma [3]

[1] Assistant Professor, Department of Political Science, University of Delhi, Delhi 110007
[2] Research Scholar, Department of Political Science, University of Delhi, Delhi 110007
[3] Assistant Professor Delhi University

ABSTRACT

English: Nation building is a historical creation and it has not been created outside its premises. By examining history, it is seen that the nation is formed in the interest of certain castes and certain linguistic-regional-cultural communities. It remains a multi-faceted campaign to fulfill the demands of these particular castes. If nations are symbols of progress and freedom, then for many they can also become sources of oppression. Scholars associated with the subaltern studies had declared that they would try to turn history in this direction by writing history from the point of view of the people, Ranjit Guha was the first to take the initiative in this. Cinema is an emerging form of literature, it is a medium to bring stories into existence by adopting the society itself. With time and history, Hindi cinema has presented the subaltern class and group in front of the audience. Those who were not given a place in the society and were not accepted. One such class is: - Vaishya women, who were never given any status in the society except as sex objects! Through this research paper, we will study and analyze whether Hindi cinema has become the 'heart voice' of Vaishya subaltern women and has been able to convey their words, exploitation, and struggle to the audience. How does Hindi cinema present their voice through its dialogues and conversations? For this study, Hindi films Begum Jaan (2017) and Gangubai Kathiawadi (2022) and other films made in contemporary times have been included as per the study objective. It is clear that Hindi cinema, along with being a medium of expression, is helpful in presenting the everyday struggle on the platform and speaks for the rights of Vaishya women by becoming their heart voice.

Hindi: राष्ट्र निर्माण एक ऐतिहासिक रचना है और इसकी रचना, इसके अहाते के बाहर नहीं हुई हैं। इतिहास की छानबीन करके यह दृष्टांकन होता है कि राष्ट्र कुछ ख़ास वर्णों और कुछ भाषाई-इलाकाई-सांस्कृतिक समुदाय के हित में बनता हैं। इन्हीं ख़ास वर्णो की मांगो को पूरा करने की बहुरूपी मुहिम-सा बनकर रह जाता है। राष्ट्र अगर प्रगति और आजादी के प्रतीक होते हैं तो कई के लिए अत्याचार के स्रोत भी बन सकते हैं। निम्नवर्गीय प्रसंग (सबाल्टर्न स्टडीज) से जुड़े विद्वानों ने यह घोषणा की थी कि वे जनता के नजरिए से इतिहास लिखकर इतिहास को यही दिशा में मोड़ने का प्रयास करेंगें, रंजीत गुहा ने इसकी पहल प्रथम की थी। सिनेमा साहित्य का ही एक उभरता रूप है,यह समाज को ही अंगीकृत करते हुए कहानियों को अस्तित्व में लाने का माध्यम हैं। समय के साथ-साथ इतिहास को अपने में समेटे हुए हिंदी सिनेमा ने सबाल्टर्न वर्ग, समूह को दर्शकों के सामने प्रस्तुत किया हैं। जिन्हें समाज में जगह नहीं दी गई और न अपनाया गया। ऐसा ही एक वर्ग हैं:-वैश्य महिलाओं का, जिनका समाज में कभी कोई दर्जा नहीं रखा गया सिवाय यौनकर्म वस्तु के! इस शोध पत्र के माध्यम से हम यह अध्ययन व विश्लेषण करेंगे कि क्या हिंदी (सिनेमा वैश्य सबाल्टर्न महिलाओं की 'मर्म आवाज' बनकर, उनकी बात, शोषण, उनके संघर्ष को दर्शकों तक रख पाया है।हिंदी सिनेमा कैसे अपने संवादा, वार्ता द्वारा इनकी आवाज प्रस्तुत करता है। इस अध्ययन के लिए समकालीन समय में बनी हिन्दी फ़िल्म बेगम जान (2017) और गंगूबाई काठियावाड़ी (2022) व अन्य फिल्मों को अध्ययन उद्देश्य अनुसार शामिल किया गया हैं।यह बात स्पष्ट हैं कि हिंदी सिनेमा अभिव्यक्ति का माध्यम होने के साथ-साथ रोजमर्रा की कश्मकश को पटल पर प्रस्तुत करने में सहायक हैं और वैश्य महिलाओं की मर्म आवाज बनकर उनके हक के लिए बोलता हैं।

Keywords: Subaltern, Hindi Cinema, Vaishya Women, Rights, Nationalism, Ideal Woman, Patriarchy, सबाल्टर्न, हिंदी सिनेमा, वैश्य महिलाओं, अधिकार, राष्ट्रवाद, आदर्श महिला, पितृसत्ता

Corresponding Author
Dr. Avantika Singh,
avantika161@gmail.com

DOI
10.29121/shodhkosh.v4.i2.2023.2771

Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

Copyright: © 2023 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License.

With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.

OPEN ACCESS

1. प्रस्तावना

रंजीत गुहा को 'निम्नवर्गीय' प्रसंग यानी सबाल्टर्न स्ट्डीज के जनक के रूप में माना जाता है 1980 के दशक में सबाल्टर्न स्ट्डीज समूह का निर्माण हुआ। सबाल्टर्न स्ट्डीज की अवधारणा यह थी कि भारतीय इतिहास-लेखन, संभ्रांतीय पूर्वाग्रह से ग्रस्त हैं और इस परंपरा से असंतुष्ट होकर गुहा ने इस संदर्भ का नया प्रकाशन किया। गुहा अन्य विद्वानों ने जनता के नजरिए से इतिहास लिखकर, इतिहास को सही दिशा दी है।1

इटली के मार्क्सवादी चिंतक अंतोनियो ग्राम्शी ने (1891-1937) अपनी रचना प्रिजन नोटबुक्स मे सबाल्टर्न शब्द का सबसे पहले प्रयोग किया जो कि समाज के गौण, दलित, उत्पीड़ित, मुत्तालिब लोगो के लिए इस्तेमाल किया था।2 ग्राम्शी के अनुसार निम्नवर्गीय समूहों का इतिहास हमेशा शासकीय समूह से जुड़ा होता है। गुहा ने इस नए शब्द का सहारा नए इतिहास लेखन के लिए किया है। जिसमें उन्होंने 'आम जनता' गरीब किसान, चरवाहा, कामगार, मजदूर, दलित जातियां, समाज आदि की उदारावस्था से आगे सोच विचार तक पहुंचने का प्रयास किया है।

कन्साइज ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी में दिए गए अर्थ के अनुसार रंजीत गुहा ने इसे परिभाषित किया है:-

'सबाल्टर्न' (निम्नवर्गीय) शब्द का अर्थ कन्साइज ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी से लिया गया हैं जिसका अर्थ है 'छोटा पद'। हम इसका उपयोग दक्षिण एशियाई समाज के मातहत वर्ग के लिए कर रहे हैं जहां यह वर्ग, जाति। उम्र लैगिक भेदभाव (जेंडर) और पद या दूसरे रूप में सामने आता हैं।3

सबाल्टर्न समूह के लेखको ने सामग्री निकाली यह भूसे से अनाज को अलग करने जैसा था 'सबाल्टर्न' या निम्नवर्गीय' शब्दावली ये इनका अभिप्राय प्रभुत्व और मातहती के दर्जे को चाहे व आर्थिक या सांस्कृतिक शक्ति, बाहुबल या सेना, या फिर वर्ण, जाति या लिंग की 'श्रेष्ठता' के आधार पर हो- इतिहास मे दर्शाने की थी जो काम रोचक होने के साथ दुष्कर भी था4 इनकी आवाज कैसे पेश की जाए, दस्तावेज़ में तालमेल पैदा कैसे हो यह सभी सवाल इनके सामने थे निम्नजन को ह्रास से उठाकर केंद्रीय पृष्ट पर लाने का काम सबाल्टर्न स्ट्डीज के लेखकों ने किया हैं।

साहित्य समाज का दर्पण होता है जैसा समाज होगा वैसा ही साहित्य रचना और हिंदी सिनेमा भी इसका प्रतिरूप दर्पण है जो न सिर्फ समाज की समझ, सोच को पर्दे पर प्रदर्शित करता है बल्कि इससे आगे बढ़कर एक नईं राह भी दर्शकों के सामने रखता है जो सामाजिक मुद्दों से जुड़ी होती हैं। यह न केवल एक समान क्रमबद्ध, रैखिक स्पेस निर्मित करता है बल्कि स्थानिकता दृश्य ध्वनि, भावनाओं-संवाद से बनने वाले स्पेस को भी उद्रेलित करता है। भारतीय हिंदी सिनेमा के केन्द्र मे सबाल्टर्न पात्र और कथानक के साथ कई कहानियों का निर्माण किया गया हैं।5 राष्ट्रवादी सोच जहां महिलाओं का सान्निध्य 'मातृ' रूप में करती हैं वह वैश्य महिलाओं की छवि धूमिल हैं वह शुद्ध या पूज्य योग्य नहीं हैं अगर हम इस तर्क को बुनियादी रूप में नहीं लेते और इस पर प्रदृष्टांत प्रदान नहीं करते तो हम पहले की तरह 'समाज' या राष्ट्र की तारीख लिखने के नाम पर एक अधूरे इतिहास को कलमबंद करते रहेगें, ऐसा राष्ट्र जहां वी.डी सावरकर के "पितृभू और पुण्यभू" की छवि का प्रभाव हैं लेकिन वैश्य महिलाओं की दिशा, इनकी ह्रास स्थिति, शोषण इससे परे हैं। सिनेमा व साहित्य द्वारा अगर यह प्रकट न किया जाए तो शायद ही इनकी स्थिति पर दर्शक, समाज विचार भी करे और यह कहानियां, आपबीती कथा इनका दर्द, मर्म इतिहास मे कहीं लुप्त होकर रह जाए।

उपनिवेशिक काल में महिलाओ की स्थिति अच्छी नहीं रही पितृसत्ता के साथ साथ सामाजिक रूढ़िवादी विचारधारा हावी रही हैं इसका ही एक उदाहरण गायत्री चक्रवती स्पीवाक अपने लेख 'can the subaltern speak' (क्या सबाल्टर्न बोल सकता हैं?) में सत्ती प्रथा पर सामाजिक राजनीतिक तर्क प्रस्तुत करती हैं। पार्थ चटर्जी व अन्य विद्वान ने भी स्त्री सबाल्टर्न पर विश्लेषण किया है। हमारे अध्ययन व विश्लेषण का केंद्र वैश्य महिलाओं की स्थिति पर हैं जिनकी 'आवाज' का माध्यम हिंदी सिनेमा बना हैं इस संदर्भ के स्पष्ट परिदृश्य के लिए बेगम जान (2017) और गंगूबाई काठियावाड़ी (2022) भारतीय हिंदी भाषी फिल्म हैं और दोनों फिल्म वैश्य महिलाओं पर समाज के शोषण, उत्पीड़न व इनकी मर्म स्थिति के साथ साथ संवाद द्वारा इनकी आवाज की प्रस्तुति करती हैं बेगम जान फिल्म की पटकथा विभाजन के मर्म मे वैश्य की स्थिति को दर्शाती हैं वहीं गंगूबाई काठियावाड़ी फिल्म जो ब्रिटिश भारत में काठियावाड़ कहलाता था बाद में (वर्तमान) गुजरात भारत में है एक सच्ची कहानी पर आधारित फिल्म इसके साथ-साथ अम्रपाली (1966) पाकीज़ा (1972),अमर प्रेम (1972), तवायफ (1985), चांदनी बार(2001) फिल्मों का प्रयोग,कैसे समय के साथ-साथ सिनेमा ने भी परिदृश्य में बदलाव लाया हैं यह समझने के लिए किया है। हिंदी सिनेमा वैश्य महिलाओं की आवाज ऐसी ही पृष्टभूमि पर रखता हैं जैसे फिल्म में अभिनेत्री/अभिनेता सिर्फ होठ हिलाते हैं और वास्तविक गायन गायिका अपनी आवाज़ में करती हैं। किसी की आवाज़ दूसरे की प्रस्तुति हो जाती हैं वैसे ही सिनेमा भी एक माध्यम हैं इनकी आवाज को बया करने का, इसके साथ-साथ सिनेमा ने ह्रास पर रही इन महिलाओं को केंद्र भूमिका में प्रस्तुत किया है। जिन्हें समाज में 'दूसरे समाज की औरतें बोलकर एक दीवार खींच दी जाती हैं। वैश्य महिलाएं,सबाल्टर्न महिलाओं के अंतर्गत ही एक उपकड़ी के रूप में हैं जो शोषण व सामाजिक दरकिनार का शिकार हैं अधिकार की बात तो दूर हैं। रंजीत गुहा ने हरिहर वैष्णव को दिए अपने एक साक्षात्कार में सिनेमा और इसके रचियताओ को सबाल्टर्न पात्रों को लोगों तक पहुंचाने का सशक्त माध्यम माना हैं।6

[1] शाहिद अमीर, ज्ञानेंद्र पांडेय(1995), पृष्ट-7
[2] शाहिद अमीन, ज्ञानेंद्र पांडेय (1995), पृष्ट-9
[3] http://egyankosh.ac.in//handle/123456789/44799,पृष्ट-19, महेश कुमार मिश्रा (2021), पृष्ट-28
[4] शाहिद अमीन, ज्ञानेंद्र पांडेय (1995), पृष्ट-10
[5] स्मृति सुमन (2019), पृष्ट-254
[6] https://pahalpatrika-com/frontcover/getrecord/243dated 08-03-2022

आगे हम वैश्य सबाल्टर्न महिलाओं पर चर्चा करेंगे कैसे पूर्व उपनिवेशवाद से स्वतंत्रता पश्चात इनके लिए प्रयोग शब्दावली में बदलाव आया और पेशे में भी परिवर्तन आता गया।

वैश्य महिलाएं सबाल्टर्न रूप में:-

ONIMHAWO के अनुसार:- नारीवादियों का मानना है कि महिलाओं को यह चुनने का अधिकार और स्वतंत्रता होनी चाहिए कि उनके शरीर का क्या होगा। उन्हें भी समाज में पुरुषों की तरह समान अधिकार मिलना चाहिए।7 लेकिन क्या सही मायने मे यह अधिकार एक महिला को हैं? महिलाओं को वासना पूर्ति का साधन नही समझा जाता हैं? भारतीय समाज में एक 'आदर्श पत्नी' और 'एक आदर्श महिला' और 'एक वैश्य महिला' को समान दर्जा कभी प्राप्त ही नहीं हो सकता हैं।

शशि देश पांडे अपने उपन्यास में, महिला की स्थिति और मानव निर्मित सांसारिक समाज में उसकी भूमिका पर कहती है:- एक महिला को एक आदर्श पत्नी, एक माँ और परिवार में विविध भूमिकाओं वाली एक उत्कृष्ट गृहिणी माना जाता है। पत्नी और माता के रूप में सेवा, त्याग,विनम्रता और सहनशीलता उसके आवश्यक गुण हैं। समायोजन की श्रृंखला वह करती है, और फिर भी वह पुरुष के बराबर नहीं है यह दुनिया भर में महिला की दुर्दशा है।8

भारतीय पूर्व उपनिवेश काल में महिलाओं की स्थिति धार्मिक, सांस्कृतिक रीति-रिवाज से परे एक श्रेष्ठ छवि के रूप में थीं लेकिन उपनिवेशवाद के दौर में यह स्थिति गिर गई। भारतीय इतिहास में गार्गी, मैत्री की आवाज़ उपनिषदों के अमर वार्तालापो में हमेशा ही सुनी जाती रहेंगी।9 लेकिन वैश्य महिलाओं (जो अन्य महिलाओं में भी अन्य है) इनकी आवाज़ नहीं सुनी गई, यह संसार द्वारा वैश्य बनाई गई लेकिन वापस एक महिला न बन सकीं। मार्क्स और सबाल्टर्न लेखक इतिहास की पुनरचना कर रहें थे, तो उस समय इनकी स्थिति कैसे इनकी नजरो से वंचित रह गई जबकि इनका शोषण सामाजिक-आर्थिक दोनों रूपों में हों रहा था। यह शब्दावली ऐसे ही प्रयोगी नहीं थी जिस रूप में आज हैं। उर्दू शब्द 'तवायफ' जिसे हिंदी शब्दावली के अनुसार वैश्या कहा जाता हैं। भारतीय पारंपरिक मिथक में कई अप्सरा का जीकर मिलता हैं जिनका शारीरिक आकर्षण लुभावना होता था और जो सुंदरता से सुसज्जित होती थीं यह नर्तिका होती थीं।10 वेश्यावृति भारत में चिरकाल से मौजूद थी। प्राचीन काल में राजा रजवाड़े और शाही घराने के लोग 'खड़ी महफिलों' में इन्हें आमंत्रित किया करते थे ये महिलाएं इनकी महफिलों की शान समझी जाती थी।11

16वी शताब्दी तक इन नर्तकियों को शाही सम्मान हासिल था लेकिन धीरे-धीरे शाही घरानों की नर्तकियों से शुरू यह सफ़र आज एक ऐसे पड़ाव पर आ पहुंचा है जहां वैश्य महिला होना समाज के लिए अभिशाप माना जाता हैं ऐसा ही परिदृश्य आनंद और बुद्ध के संवाद से भी पता चलता है जब वैशाली की अम्रपाली जो कि एक वैश्य महिला थीं वह बुद्ध से मिलने व भोजन करने का आमंत्रण देती हैं और बुद्ध के आमंत्रण को स्वीकार करने की बात को लिच्छवियो ने अपमानित माना था।12 ऐसा ही मुगलकाल में तवायफों का काम केवल दरबार में नाच और गा कर शाही परिवार का मनोरंजन करना होता था लेकिन इस समय वैश्य या तवायफ दोनों का यहीं काम था सिर्फ़ भाषाई प्रयोग से नाम अलग है।

मंदिर में जो पारंपरिक नर्तिका होती थी ब्रिटिश लोग उन्हें 'नोच' कहते थे यह व्यवस्था उस समय हर प्राचीन मंदिर में चलती थीं कुछ स्थानों पर यह व्यवहार में उन्हें देवदासी कहा जाता था जिनका पहला संबंध अभिजात वर्ग के ब्राह्मण के प्रथम पुत्र के साथ होता था देवदासी का मकसद धार्मिक रूढ़िवादी परंपरा के रूप में किया जाता था देवदासी को मंदिर की वैश्य माना जाता था।13 18वी शताब्दी में यूरोपीय सिपाहियो के बीच यौन रोग संक्रमित होने लगा था जिससे पता चलता है कि इनके संबंध वैश्य महिलाओं से होते थे उस समय इनके इलाज के लिए उन्हें 'लाल बाज़ार' और 'लॉक हॉस्पिटल' व्यवस्था में रखा जाता था (यह एक क्षेत्र था) जहां वैश्य महिलाओं को इलाज़ के लिए रखा गया था।14 महाराष्ट्र, कर्नाटक, बंगाल में पूर्व उपनिवेश काल में इस पेशे में कई सामाजिक-आर्थिक बदलाव हुए ब्रिटिश काल में वाणिज्यिक व प्रशासनिक संबंध बदलने के साथ कृषक, जनजाति जनसंख्या, गृहणियों, वैश्य महिलाओं के स्तर में भी भारी परिवर्तन 19वी शताब्दी में हुआ15 जहां उपनिवेश प्रशासन के लिए खास इंतजाम किए जाते थे भारतीय वेश्यो को इनके सिपाहियो के आगे पेश किया जाता था इसके लिए कोठे होते थे जिन्हें 'चकला' कहा जाता था। 19वी शताब्दी में इन्हे 3 श्रेणी में बांटा गया था गौरा चकला (जो सिर्फ़ व्हाइट ऑफिसर के लिए आरक्षित थी), लाल कुर्ता चकला (इन्फेंट्री रैंक के लिए थीं), काला चकला (भारतीय सिपाहियों के लिए थीं) इन्हें वैश्य तथा पुरुष प्रभुत्व लोगो को 'बाबू' कहा जाता था16 और कहीं न कहीं यहीं स्थिति उत्तर उपनिवेशवादी काल में भी रही जिसकी प्रस्तुति फिल्म बेगम जान (2017) और गंगूबाई काठियावाड़ी (2022) प्रस्तुत करती हैं जिस पर हम विस्तार से चर्चा करेंगें। गायत्री

[7] सयार सिंह चोपड़ा (2017),pg-84
[8] वही..... pg-85
[9] डॉ. अंबेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय लेख और भाषण (2019), खंड-36,पृष्ट-494.
[10] सुमांत बैनर्जी (1993),पृष्ट-2463.
[11] https://www.indiatimes.com/lifestyle/self/history-of-prostitution-277526.html
[12] डॉ. भीमराव अंबेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय लेख और भाषण,खंड-36,पृष्ट-495-6
[13] एरिका वाल्ड (2009),pg-9
[14] वहीं.....,पृष्ट 6-13
[15] सुमंता बनर्जी(1993).pg.2463
[16] वहीं.....,पृष्ट-2463.

स्पीवाक कहती हैं उत्तर उपनिवेश यह संकेत नहीं है कि संघर्ष खत्म हो गया बल्कि यह संघर्ष विउपनिवेश की तरह स्थानांतरित हो गया।17 इसी मे महिला सबाल्टर्न के अंतर्गत कहीं वैश्य महिलाओं का भी 'मर्म' छुपा हैं।

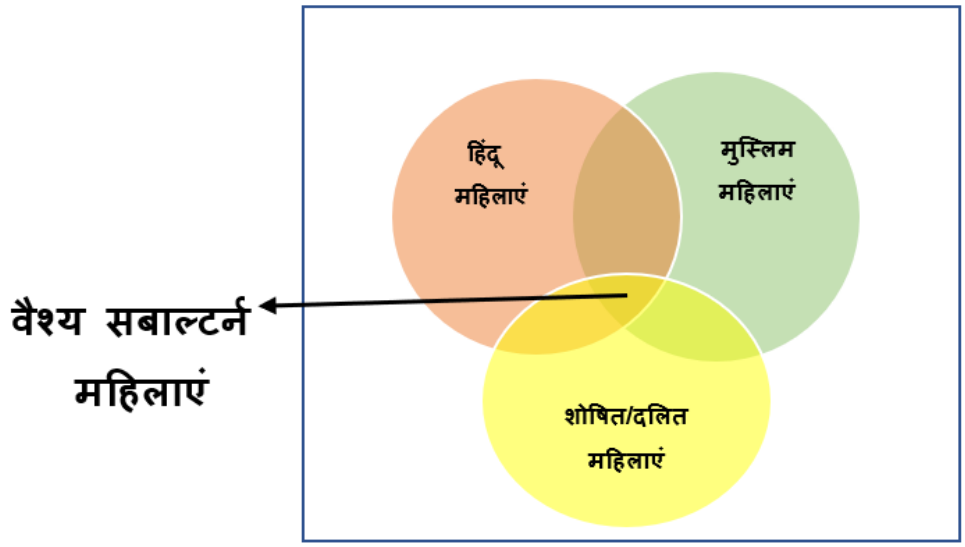

चित्र:-1 वैश्य महिलाओं को इंटरसेक्टिंग सर्कल द्वारा दर्शाया है

यह चित्र स्पष्ट रूप से वैश्य महिलाओं की स्थिति को 'आम महिलाओं' में प्रदर्शित करता है हिंदू महिलाओं में उन्हें वैश्य, उर्दू जवान में उन्हें तवायफ तथा शोषित व दलित समूह में उन्हें बेड़नी18 भी कहा जाता है बस व्यावहारिक शब्दावली का फ़र्क है। यहां चित्र का छायावादी भाग समाज में वैश्य सबाल्टर्न महिलाओं को दर्शाता हैं। इसी वास्तविकता को हिंदी सिनेमा ने पर्दे पर दर्शाया है आगे हम इसे फिल्मों के माध्यम से समझेंगे व विश्लेषण करेंगें।

हिंदी सिनेमा में वैश्य आधारित फिल्मों का दृष्टांत: सबाल्टर्न नजरिए से:-

इतिहास की आपबीती कोई दफ़न होने वाली कथा नहीं हैं यह तब तक शोर मचाएगी जब तक 'अंदाज-ए-बयां' न किया जाए और बयान करने के लिए हिंदी सिनेमा एक ऐसा माध्यम हैं जिसमें सबाल्टर्न तबके पर फिल्म बनाई हैं। वैश्य फिल्म जिसका विश्लेषण हम प्रथम कर रहे हैं वह हैं:-

बेगम जान (2017) जिसका निर्देशन श्री जीत मुखर्जी द्वारा किया गया हैं। जिसमें विद्या बालन मुख्य किरदार 'बेगम जान' के रूप में निभा रही हैं जो की एक वैश्य हैं। कहानी 1948 की दिवंगत भारतीय स्वतंत्रता अवधि की पृष्टभूमि में दर्शायी गई हैं यह फ़िल्म विभाजन के उस मर्म को प्रस्तुत करती हैं जहां सिर्फ दो देशों के बीच लाईन ही नहीं खींची गई बल्कि बेरहमी से घर भी छीने गए महिलाओं की आबरू से भी खेला गया यह कहानी हैं एक कोठे की जो दोरांगला और शकरगढ़ के बीच बॉर्डर लाईन पर था वह लाईन जिसे माउंटबेटन के फरमान पर 'रेडक्लिफ लाईन' के रूप में खींचा जाना था। हिंदुस्तान और पाकिस्तान के दो हिस्से कर दिए सब बांटा गया गली फार्म, जमीन सब कुछ लेकिन इस समय कोठे शहर से बाहर होते थे इसलिए इसे भी हटाना था। सरकारी अफ़सर(इलियास और हरिप्रसाद) हर हाल में उसे हटाना चाहते हैं और इसी हठ में कबीर नामक गुंडे से उनका शोषण करवाते हैं और अंत में वह सभी महिलाएं खुद को कोठे में ही 'जोहर' कर लेती हैं और पीछे पृष्ट मे अम्मा चितौड़गढ की रानी पद्मावती की कहानी सुनाती रह जाती हैं जो यह दर्शाता हैं कि वह अपने हक के लिए लड़ी और समर्पण से अच्छा खुद का अग्निदहन बेहतर समझा था।यह संक्षिप्त कहानी हैं इनके उत्पीड़न, शोषण व मर्म को फिल्म संवाद शैली में प्रस्तुत करती हैं:- मास्टर जी नाम का किरदार बेगम जान से पूछता हैं आज मुल्क आजाद हुआ हैं, आप जश्न नहीं बनाएंगी? फिर बेगम जान उत्तर देती हैं 'आज़ादी, आज़ादी तो सिर्फ़ मर्दों की होती हैं मास्टर,औरतों को तो गाली देने की भी आज़ादी नहीं हैं, बहन की जात अपनी ही मां-बहन के नाम पर गाली दो' यह संवाद समाज की 'स्टीरियोटाइप थिंकिंग' को दर्शाता हैं जहां औरतों को सिर्फ़ तुच्छ श्रेणी का समझते हैं उन्हें कैद करके पिंजरे में रखा जाता हैं और समाज में जितनी भी गालियां हैं वह भी तो स्त्रीत्त्व पर आधारित है।"बेगम जान कहती भी हैं जिस्म बेचने वाली जिस दिन बिकी उस दिन जश्न बनाए या जिस दिन नहीं बिकी उस दिन" अर्थात् उनके लिए कुछ मायने नहीं हैं आज़ादी के, उनका जीवन वैसे भी कोठे की चारदीवारी तक सीमित हैं उनके जीवन में दिन और रात घड़ी के पहर की तरह हैं। बेगम जान खुद हादसे की शिकार महिला हैं कम उम्र में पति का देहांत होने पर किसी ने उसे कोठे पर बेच दिया। कोठे पर सभी महिलाएं या तो धोखे से, प्रेम में छोड़ी हुई या

[17] एलिना स्टेंबर्म(2018),pg-6

[18] बेड़नी दलित समुदायों से होती है और आज भी मध्यप्रदेश और उत्तरप्रदेश में 25000 परिवार हैं। इनके बच्चो को मां के नाम से जाना जाता है और सच्चाई यह है कि उन्हें रखैल कहा जाता हैं और इनके यौन संबंध कई पुरुषो से होते हैं। निवेदिता मेनन,et.al (2017) प्रतिमान,92-103

हादसे की शिकार या गरीबी की मारी थी। कोठे में जो वृद्ध अम्मा हैं उन्हें भी पति मरने पर उन्हीं के बेटे ने बनारस घाट पर मरने के लिए छोड़ दिया यह एक अलग कहानी बया करता है 'हिन्दू महिला' की जिस पर समाज के रूढ़िवादी रीति-रिवाज थोपे जाते हैं और मरने के लिए छोड़ दिया जाता है स्पीवाक 'सती प्रथा' की मर्मता बताती हैं19 लेकिन इन महिलाओं का क्या जिनका जीकर तक नहीं होता। वैश्या व तावायफ इनकी ज़िंदगी में घर गृहस्थी नाम की कोई चीज नहीं हैं फिल्म में बेगम जान कहती हैं-"रंडियों के खरीदार होते हैं सोहर नहीं" इससे स्पष्ट हैं की कोठा एक वस्तु विनिमय जैसा बाज़ार हैं। जहां लोग मन बहलाने आते हैं और निकल जाते है उन्हे कोई फ़र्क नहीं पड़ता प्रेम, प्यार जैसा नही होता हैं। पार्थ चटर्जी कहते है- भारतीय स्त्रियों पर अत्याचार की एक लंबी सूची रही हैं धार्मिक सिद्धांत के ढांचे में उत्पीड़न आचरण भरा पड़ा है और शोषित महिलाओं के वर्ग में वैश्य महिलाएं भी हैं। राष्ट्रवाद द्वारा महिलाओं की पतित दिशा सुधारने का दावा किया गया और सुधार के नाम पर नई स्त्री को 'आम स्त्री' से अलग तो दिखाया गया लेकिन इसमें 'नया' जैसा इतना भर था कि उन्हें घर और परिवार की उसी व्यवस्था में अधिनस्थ बना दिया गया। आम स्त्री जो की भोड़ी, गंदी, मुंहफट, झगड़ालू, पुरुषों के वहशियाना शारीरिक दमन का शिकार थी जबकि नई स्त्री को इसके उल्ट प्रकट किया गया था20 चटर्जी यह भी चर्चा करते हैं की निम्नवर्गीय स्त्री नौकरानियां,धोबियो, नाइने,वीसाती स्त्रिया, कुटनिया, वेश्याएं थी जिन्हें पात्र के रूप में गढ़ा गया।21

बेगम जान कहती भी हैं-'इस मिट्टी का मौल है लेकिन इंसान का नहीं' उन्हें कोठे से हटाने के लिए हर अत्याचार किया गया। राष्ट्र की नींव में यह कहानी दफ़न हुई इनकी रक्षा करने कोई नही आया जो राजा उन्हें बचाने का आश्वासन देता है वह भी पीछे हट जाता हैं और यहां तक कि मरते समय भी लोग इनके शरीर का उपभोग करना चाहते है इसलिए वह मरना ही पसंद करती है। गायत्री स्पीवाक विधवा होने पर हिंदू महिला को जब सत्ती होने को कहा जाता हैं इस पर तर्क प्रस्तुत करती है कि या तो वह खुद की मर्ज़ी से करे या रूढ़िवादी समाज की वजह से करे लेकिन वैश्य महिलाएं जीवित रहकर उसी आग में तपती है उन्हें कोठे की आग में जला दिया जाता है न कोई आवाज़ सुनता है न किसी को फ़र्क ही पड़ता है। पाकीज़ा फिल्म में (नरगिश... अशोक कुमार) से कहती है:-

'हर तवायफ एक लाश है, हमारा ये बाज़ार एक कब्रिस्तान है.... ऐसी औरतों का जिनकी रुह मर जाती है और जिस्म जिंदा रहता है' यह संवाद स्पष्ट बयान करते है वैश्या सबाल्टर्न महिलाओं का उत्पीड़न, शोषण इनका दर्द जो सिनेमा ने अगर पर्दे पर न उतारा होता तो किसी को परवा भी न होती।

'आनंदमठ' में बंकिम चंद्र चटर्जी ने राष्ट्रवाद के संदर्भ में भारत भूमि को माता और वासियों को संतान कहा है। संतान को माता की रक्षा करने के लिए प्रेरित भी करते है लेकिन क्या उस मां मे भारत की हर महिला नहीं हैं चाहे फिर वो धोबिन, नाइने हो या वैश्या महिला हो। चंपाबाई (आम्रपाली फिल्म 1966की) इसे बयान कुछ ऐसे करती है:-

'मोहन बाबू (सुनील दत्त नायक) वैश्या आसमान से नहीं गिरती वो भी किसी की बेटी, बहन होती है, वैश्या भी औरत होती है बाबू' अर्थात् इनका दर्द, तकलीफ साफ है वह अपनी मर्जी से ऐसे पेशो में नहीं रहती उन्हें इस दलदल में धकेला जाता है और फिर यह समाज और इसके ठेकेदार बनने वाले लोग रात के अंधेरे में कोठे को स्वर्ग कहते है और दिन के उजाले में वैश्या खाना कहते है।'सबाल्टर्न स्टडीज XI' वॉल्यूम में आमिर मुफ्ती अपने लेख में सआदत हसन मंटो (जो एक उर्दू लेखक है और विभाजन की स्मृतियों को अपनी कहानियों में कैद करते हैं) इन्होंने अपनी कहानियों में पूर्ण-उत्तर विभाजन के समय महिलाओं की स्थिति को दर्शाते हुए कहानी लिखी है। वह कहते है कि वैश्या की कहनी का विभाजन साधारणतय:-पत्नी और मां जैसी राष्ट्रीय छवि मे नहीं हो सकता है क्योंकि यह इससे भी अधिक जटिल है क्योंकि 'कोठा-और घर' इसमें गहरा फासला है वेश्याओं का शरीर सिर्फ 'सेक्सुलेटी','उपभोग वस्तु' बनकर रह जाता है इनके लिए 'मातृतत्त्व' सिर्फ़ एक रूपक कथा और कोरी कल्पना भर बन जाता है।22

सबाल्टर्न महिलाओं के रूप में वैश्या महिलाओं का दर्द उनकी आवाज़ समाज में रहने वाले लोगों के लिए अनसुनी ही रहती अगर सिनेमा उन्हें पृष्ट पर न लाता। सारा डिके ने अपने अध्ययन में पाया कि यह तकनीक दर्शकों को एक संकेत प्रदान करती हैं लेकिन यह देखनेवालो की तर्क क्षमता पर निर्भर है वह इसे कैसे लेते है।23 हिंदी सिनेमा जैसा की गायत्री स्पीवाक बोलती हैं एक 'Supplementation' कीतरह है जो न सिर्फ़ सबाल्टर्न के लिए बोले बल्कि इनकी अस्मिता,पहचान को आकर देने में मदद करें।24

दूसरी फिल्म है:-

गंगूबाई काठियावाड़ी (2022):- यह संजय लीला भंसाली द्वारा निर्देशित और जयंतीलाल गड़ा और भंसाली द्वारा निर्मित हिंदी भाषा फिल्म है कहानी 50 और 60 दशक की ओर वास्तविक जीवन पर आधारित है जिसे गंगूबाई काठियावाड़ी के नाम से जाना जाता है जो शुरू से इस पेशे में नहीं थी प्रेमी ने धोखा देकर कोठे पर बेच दिया था वास्तविक नाम था गंगा जगजीवन दास लेकिन समय और हालात ने गंगूबाई बना दिया। फिल्म की पटकथा अन्य सभी फिल्मों से अलग हटकर वेश्यावृत्ति में हुए शोषण उत्पीड़न को तो दर्शाती है लेकिन इससे एक कदम आगे बढ़कर गंगूबाई कैसे वैश्या महिलाओं के लिए कानून हक, शिक्षा का अधिकार व समाज के सामने मंच पर आकर अपनी बात रखती है और साथ ही साथ प्रधानमंत्री पंडित नेहरु से भी इस

[19] मॉरिस सी रोसालिंड (2010),पृष्ट 62-63
[20] शाहिद अमीन, ज्ञानेंद्र पांडेय (2002),निम्नवर्गीय प्रसंग-2,पृष्ट 64-66
[21] वहीं.....,पृष्ट-65.
[22] पार्थ चटर्जी, प्रदीप जेगगनाथन, सबाल्टर्न स्टडीज-XI(2000),pg. 1-14.
[23] अजय गहलावत(2010),pg. 57
[24] वहीं.....,पृष्ट 57-58

विषय पर चिंतन करने को कहती है जो एक 'नई मुहिम' हैं। हिंदी सिनेमा को यह कहानी पर्दे पर रखने में चाहें कितना ही अधिक समय लगा लेकिन अगर यह कहानी एस. हुसैन जैदी की किताब तक सीमित रहती तो अधिकतम लोगों तक नहीं पहुंच पाती।

वैश्या सबाल्टर्न महिला की आवाज़ हम फिल्मी संवाद, डायलॉग के माध्यम से समझते है:-

पत्रकार अमित फैजी की मदद से गंगूबाई (वैश्य समाज की तरह से) सामाजिक मंच (आजाद मैदान) पर भाषण देने जाती हैं जो की अखिल भारतीय नारी विकास संस्था द्वारा आयोजित करवाया गया था और वहां नारीवादी तबके के सभी सामाजिक कार्यकर्ता भी मौजूद होते हैं: वैश्य समाज के हक, के बारे में बात करने जा रही हैं उसी समाज की श्रीमती.....मेरा मतलब है कुमारी.....(फिर गंगूनाई कहती है) रहने दीजिए। गंगूबाई बोलती है:- इन्हे बोलने में 'कन्फ्यूजन' हो रही थी हम तो जी रहे हैं। "कुवारी आपने छोड़ा नहीं और श्रीमती किसी ने बनाया नहीं" डायलॉग बहुत ही मार्मिकता समेटे हुए है। समाज ने तो कभी अपनाया ही नहीं यहां तक कि भाषाई शब्दावली में भी उन्हें कोई रोबदार जगह नहीं मिली है इसलिए गुहा के लिए भाषा दर्पण न होकर मध्यस्थता का कार्य करती हैं वास्तविक स्थिति को दर्शाती ही नहीं, परिचित भी भली भांति करवाती है गुहा- 'एलिमेंटरी आस्पेक्ट्स ऑफ पेजेंट इनसर्जेंसी इन कोलोनियल इंडिया'(1983) में कहते है- भाषा निम्नवर्गीय के दमन का मापदंड भी है। भाषा उच्चवर्गीय व्यवस्थित समाज के दमन संबंधी कार्यों का प्रमुख अंग है।25 भाषा सिर्फ़ गौरव चिन्ह नही है बल्कि यह संस्कृति में लिपटे हुए निम्नवर्गीय दमन की बर्बरता का भी चिन्ह हैं। गंगूबाई बोलती हैं: समाज के ठेकेदार यह खुद के धंधे को प्रतिष्ठा से देखते हैं और इनके धंधे को बेइज्जत कहते है हसन मंटो भी यह कहते है कि वेश्याओं की छवि छलकपटी,प्रतिरूप की मानी जाती है बल्कि यह राष्ट्र के लिए अधिक वफादार है। कोठा.....राष्ट्र के लिए प्रेम की, दूसरी तरफ़ की संभावना है।26

शिक्षा के हक के लिए आवाज़:-

गंगूबाई वैश्या के बच्चों के लिए शिक्षा के अधिकार के लिए आवाज़ उठाती है वह कहती हैं:- ठान ली है गंगू ने हमारे बच्चों को शिक्षा का हक में इन्हें दिलाकर ही रहूंगी, समाज में इंसान की तरह जीने का हक मैं लेकर ही रहूंगी। प्रिंसिपल जब पिता का नाम पूछता है.....गंगू कहती है मां का नाम काफी नहीं है न.....।

इस संवाद से स्पष्ट है कि वह आम जीवन जीना भी चाहें तो नहीं जी सकती है इनकी यह पहचान उम्र भर साथ रहती हैं और आम जीवन जीने नहीं देती है।

स्पीवाक लेख 'Rightly wrongs' में वकालत करती है शिक्षा निम्नस्तर से मिलनी चाहिए ताकि वह अपने अधिकारों के लिए प्रशिक्षण ले सके और संप्रभुत्व शक्ति, दबाव को पलट के उत्तर दे पाए।27 लेकिन व्यवहार में यह अधिक जटिल है। सिर्फ़ शिक्षा ही नहीं फिल्म वैश्या महिलाओं के स्वास्थ्य पर भी दृष्टांत करती हैं। "इतिहास की किताब में गंगू जैसे के जीकर भी नहीं होते पर ये गलियां अपना इतिहास याद रखती है" और गंगूबाई ने कोठे की महिलाओं की भलाई के लिए हर प्रयास किया, यह गलियां इस बात की साक्षी हैं।

ज्ञानेंद्र पांडेय लिखते हैं:- इतिहास द्वारा पहचानी जाने वाली हिंसा का रोजमर्रा की उस हिंसा से कोई संबंध नहीं होता जो "हाशिए" पर रहे समुदाए के साथ होती है।28

दोनों मुख्य फिल्म वास्तविक प्रतिरूपण प्रस्तुत करने में सफल है। फिल्में सबाल्टर्न समूह को 'स्वयं' के लिए सोचने और प्रश्न करने के लिए प्रेरित करती हैं और ज्ञानोदय प्रदान करती हैं।29

2. निष्कर्ष

फिल्में समाज का दर्पण होती हैं यह समाज की वास्तविकता को पर्दे पर उतारने का एक माध्यम होने के साथ-साथ समाज में उन समूहों के (सबाल्टर्न) के लिए आवाज़ भी है जिन्हें आम जिंदगी को कोई सुनना शायद ही पसंद करता हो। बेगम जान (2017) और गंगूबाई काठियावाड़ी (2022) दोनों फिल्मों के निर्देशक वैश्य सबाल्टर्न महिलाओं के मर्म को फिल्म-चरित्रों-कथांनको के माध्यम से प्रस्तुत करते है जो बहुत सराहनीय भी है। फिल्मों के संवाद, डायलॉग के माध्यम से वह इनकी आवाज़ को मंच पर रखकर, उनके लिए बोलते है इसमें कोई संदेह नहीं हैं लेकिन जैसा कि हमने उपरोक्त विश्लेषण किया, यह फिल्मी कथा विभाजन के दौरान और विभाजन के बाद की(वास्तविकता आत्मकथा) हैं लेकिन इन्हें पर्दे पर आने मे काफी समय लगा, यह दर्शाता है कि हिंदी सिनेमा धीरे-धीरे एक संप्रेषण माध्यम बनकर उभरा सबाल्टर्न महिलाओं के लिए, उनकी व्यवस्था, दुर्दशा, सामाजिक बहिष्कार, शोषण, उत्पीड़न व धीरे-धीरे उनके हक के अधिकारों के लिए बोलता नजर आता है। गायत्री स्पीवाक ने लेख में प्रश्न उठाया है कि क्या सबाल्टर्न बोल सकते है? इस संदर्भ में हमने हिंदी सिनेमा में वैश्य सबाल्टर्न महिलाओं कथानको को बोलते देखा है यह बात स्पष्ट है कि पितृसत्ता समाज जो खुद ही इनकी सेवा का उपभोग करते हैं वहीं समाज के ऊंचे महलों में बैठकर उन्हे धिकारते भी है यानी इनका नज़रिया सिर्फ़ अपनी खुशी तब सीमित होता है। वैश्य महिला बोलने का प्रयास भी करे तो संभ्रांतीय समाज उन्हें इस नजरिए से सुन भी नहीं सकता क्योंकि फिर भाषाई शब्दावली

[25] रश्मि दुबे भटनाकर (2014), पृष्ट-615.
[26] पार्थ चटर्जी, प्रदीप जेगगनाथन,सबाल्टर्न स्टडीज-XI (2000),pg. 30.
[27] मॉरिस सी रोसालिंड(2010), pg-220
[28] शाहिद अमीन, ज्ञानेंद्र पांडेय (2002),निम्नवर्गीय प्रसंग-2,पृष्ट 195-196.
[29] अजय गहलावत(2010),pg. 79-80

उनके आदर्श के अनुसार नहीं होगी। राष्ट्रीय 'मातृतत्त्व' महिला जो शुद्ध और पवित्र उनके अनुसार वैश्य महिलाएं उस समाज का हिस्सा ही नहीं है-अन्य महिलाएं हैं। गंगूबाई कहती भी है:- कोठा न हो तो गली गली जंगल बन जाएगा और औरते हवस का शिकार होगी' इस बात मे कितनी वास्तविकता है हम जानते भी है। हिंदी फिल्म ने अम्रपाली (1966), पाकीज़ा(1972),अमर प्रेम (1972),तवायफ (1985), चांदनी बार(2001), चमेली (2003), बेगम जान (2017) और गंगूबाई काठियावाड़ी(2022) इन सभी फिल्मों में न सिर्फ समय के साथ कथानको को दर्शाया बल्कि इनके माध्य से वैश्य महिलाओं की आवाज, उनके स्वास्थ्य, शिक्षा, अधिकार व सामाजिक भाग के लिए भी बोला है। पितृसत्तात्मक समाज में वैश्य सबाल्टर्न महिलाओं को तुच्छ श्रेणी दी गई है, समाज का भाग नहीं माना जाता है उन्हें कलंक, गंदगी भर माना जाता हैं। अर्चना वर्मा (नारीवादी है) कहती हैं:- "सेक्सवर्कर (योनकर्मियो)' यह एक ऐसी अस्मिता है जिन पर समाज ने चारों ओर से शर्मिंदगी का बोझ डाल रखा है।" बजाए इसके 'हमे इनके साथ सम्मान से पेश आना चाहिए क्योंकि यह बहुत ही हिम्मत और संकल्प वाली औरतें हैं'

इस प्रकार हिंदी सिनेमा सबाल्टर्न समूह-जो हाशिए पर हैं, समाज में जिनको बोलने ही नहीं दिया जाता, प्रभुत्व जमाया जाता है, उत्पीड़न होता हैं, जिनमें वैश्य महिलाएं भी शामिल है इनके लिए कथानको के माध्यम से बोलता हैं, उनकी आवाज़ बनकर दर्शकों तक, उनकी वास्तविक मर्म (यथार्थ) स्थिति को प्रदर्शित करता है।

CONFLICT OF INTERESTS

None.

ACKNOWLEDGMENTS

None.

REFERENCES

Amin Shahid, Pandey Gyanendra, Lower Classes-1, Rajkamal Publications, 1995-Introduction, 7-10.

Amin Shahid, Pandey Gyanendra. "The Nation and Its Women". Lower Classes-2, Partha Chatterjee, 64-68. Rajkamal Publications, 2002.

…… "Gairiyat Ka Gadya", Lower Classes-2, Gyanendra Pandey, 195-196, Rajkamal Publications, 2002.

Banerjee, Sumanta. "The 'Vaishya' and the 'Babu': Prostitute and Her Clientele in 19th Century Bengal". EPW, 28.45(1993):2461-67.

Bhatnagar Dubey, Rashmi. "Peasant Revolution and Oriented Philology: Lower Classes, Sympathetic Reader Tradition and the Conflict of Languages. Pratiman.CSDS, Vol. 2, Vol. 2(July-December2014):613-626.www.csds.in/Pratiman.

Booth D., Gregory. "Making a Woman from a Tawaif: Courtesans as Heroines in Hindi Cinema". Nijas 9,2(2007):1-26.

C Rosalind, Morris. Can the Subaltern Speak? Reflections on the History of an Idea. New York: Columbia University Press,2010.

Dr. Ambedkar Complete Works: Writings and Speeches, "The Rise and Fall of Hindu Women: Who Was Responsible for It?", Sitaram Khodawala, 490-7,2019, Vol. 36. New Delhi.

Gahlawat, Ajay. "Can the Bollywood Films Speak to the Subaltern?". Reframing Bollywood: Theories of Popular Hindi Cinema, 57-80. Sage Publications, 2010.

Landry Donna, Maclean Gerald (ed.) The Spivak Reader: Selected Work of Gayatri Chakravorty Spivak. New York and London: Routledge, 1996.

Menon Nivedita, Verma Archana et. al. "Indian Feminism: Dimensions; Identity and Intimacy". Pratimaan 9(January-June 2017):92-103.

Mishra Kumar, Mahesh. "An Analysis of 'Subaltern' Characters and Narratives at the Centre of Indian Hindi Cinema". Is.Univ.Ja. Vol. 9, No. 2(2020):181-188.

…… "A Study of Subaltern Representation in Post-Independence Indian Hindi Cinema". Rajasthan: Vanasthali Vidyapeeth, 2021.

R. Mufti, Aamir. "A Greater Story-Writer Than God: Genre, Gender and Minority in Late Colonial India". Community Gender and Violence Subaltern Studies-XI, edited by Chatterjee Partha, Jeganathan Pradeep, 1-36. Permanent Black, 2000.

Shinborn, Elina. "The Subaltern Will Never Speak: Critical Reflections on Mill's Thoughts of Political Representation". Leuphana Universitaet Lüneburg. (2018): 6-24.

Singh Chopra, Sayar. "Representations of Subaltern Women's Literature: A Study of Selected Contemporary Indian Fiction". Journal of Literature and Cultural Studies, edited by: Dr. Christina Z. Jama, 84-85. Mizoram University: MZUJLCS, (December 2017).

Spivak, Gayatri Chakravorty. "Writing Wrongs". Duke University Press, 103, no.2/3, 2004:526-549.

Spivak, Gayatri Chakravorty. "Can the Subaltern Speak? In Colonial Discourse and Post-Colonial Theory: A Reader. Edited by Patrick William Laura Chrisman, 66-111, New York: Columbia University Press, 1994.

Suman, Smriti. "Counversalism and Hindi Cinema". Paradigm,(13/5/2019):252-254.

Wald, Erika. "From Begums and Bibis to Abandoned Females and Ideal Women: Sexual Relationships, Venereal Diseases and the Redefinition of Prostitution in Early Nineteenth Century India". University of Cambridge,(2009):5-25.